



श्रीमद्भगवद्गीता का विश्वबंधुत्व संदेश एवं मानव मूल्यों में उसका योगदान

डॉ. सरोज,
सह आचार्य संस्कृत,
रामेश्वरी देवी कन्या महाविद्यालय भरतपुर, राजस्थान.

सारांश

भगवद्गीता मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक आयामों का एक समन्वित दर्शन प्रस्तुत करती है, जिसमें विश्वबंधुत्व की भावना और मानव मूल्यों का सशक्त प्रतिपादन मिलता है। प्रस्तुत अध्ययन में गीता के उन प्रमुख सिद्धांतों का विश्लेषण किया गया है, जो समत्व, सर्वभूत हित, करुणा, अहिंसा और आत्मसंयम जैसे मूल्यों को स्थापित करते हैं। श्रीकृष्ण के उपदेशों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि समस्त प्राणी एक ही परमात्मा के अंश हैं, अतः सभी के प्रति समान दृष्टि और प्रेम का भाव रखना आवश्यक है। यह अध्ययन दर्शाता है कि गीता का विश्वबंधुत्व संदेश केवल आध्यात्मिक सिद्धांत नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता और वैश्विक शांति की स्थापना का व्यावहारिक आधार भी है। साथ ही, यह मानव मूल्यों के विकास के माध्यम से व्यक्ति और समाज दोनों के समग्र उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त करता है।

मुख्य शब्द: विश्वबंधुत्व, मानव मूल्य, समत्व, करुणा, निष्काम कर्म

प्रस्तावना

भगवद्गीता भारतीय दार्शनिक परंपरा का एक अद्वितीय और सार्वकालिक ग्रंथ है, जो न केवल आध्यात्मिक उन्नति का मार्गदर्शन करता है, बल्कि मानव जीवन के नैतिक, सामाजिक और वैश्विक आयामों को भी दिशा प्रदान करता है। आधुनिक युग में जब विश्व अनेक प्रकार के संघर्षों, असमानताओं, सांस्कृतिक विभाजनों और नैतिक संकटों से जूझ रहा है, तब गीता का "विश्वबंधुत्व" का संदेश अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है। गीता में प्रतिपादित समत्व, करुणा, अहिंसा, आत्मसंयम और सर्वभूत हित की भावना मानव समाज को एकीकृत करने वाले मूलभूत सिद्धांत हैं। श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए उपदेशों में यह स्पष्ट किया गया है कि समस्त प्राणी एक ही परमात्मा के अंश हैं—*"विद्या विनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि, शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः"* (5.18)—अर्थात् ज्ञानी व्यक्ति सभी प्राणियों में समान दृष्टि रखता है। यह दृष्टिकोण विश्वबंधुत्व की भावना को सुदृढ़ करता है, जिसमें जाति, धर्म, भाषा और राष्ट्रीयता के भेद गौण हो जाते हैं।

इसके साथ ही, गीता मानव मूल्यों के संवर्धन में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। यह व्यक्ति को निःस्वार्थ कर्म, सत्यनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता और आत्मसंयम का मार्ग दिखाती है, जिससे वह न केवल व्यक्तिगत स्तर पर उन्नति करता है, बल्कि समाज में भी नैतिकता और समरसता की स्थापना करता है। गीता का संदेश केवल धार्मिक उपदेश तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यावहारिक जीवन-दर्शन है, जो व्यक्ति को आत्मिक शांति और सामाजिक उत्तरदायित्व के संतुलन की ओर प्रेरित करता है। इस प्रकार, प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य गीता में निहित विश्वबंधुत्व के संदेश और मानव मूल्यों में उसके योगदान का विश्लेषण करना है, ताकि यह समझा जा सके कि यह ग्रंथ आधुनिक वैश्विक समाज के लिए किस प्रकार एक नैतिक एवं आध्यात्मिक मार्गदर्शक के रूप में कार्य कर सकता है।

अध्ययन का दायरा

यह अध्ययन भगवद्गीता में निहित विश्वबंधुत्व के संदेश तथा मानव मूल्यों में उसके योगदान के विश्लेषण तक सीमित है। इसमें गीता के प्रमुख अध्यायों और श्लोकों के आधार पर समत्व, करुणा, अहिंसा, निष्काम कर्म, आत्मसंयम और सर्वभूत हित जैसे मूल्यों का दार्शनिक एवं व्यावहारिक विवेचन किया गया है। अध्ययन का दायरा मुख्यतः गुणात्मक विश्लेषण पर आधारित है, जिसमें गीता के उपदेशों को आधुनिक सामाजिक, नैतिक और वैश्विक संदर्भों से जोड़कर देखा गया है। श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित शिक्षाओं के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार ये सिद्धांत वर्तमान समाज में शांति, सह-अस्तित्व और नैतिक संतुलन स्थापित करने में सहायक हो सकते हैं। यह अध्ययन ऐतिहासिक या सांख्यिकीय विश्लेषण तक सीमित न होकर दार्शनिक, तुलनात्मक और व्याख्यात्मक दृष्टिकोण अपनाता है, जिससे गीता के सार्वभौमिक संदेश की प्रासंगिकता को स्पष्ट किया जा सके।

अध्ययन की आवश्यकता

1. आधुनिक समाज में मूल्य-संकट

वर्तमान समय में तीव्र भौतिकवाद, उपभोक्तावाद और प्रतिस्पर्धा के कारण मानव जीवन में नैतिक मूल्यों का हास स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। परिणामस्वरूप असहिष्णुता, हिंसा, स्वार्थपरता और मानसिक असंतुलन जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं। ऐसे परिदृश्य में भगवद्गीता के सिद्धांत—जैसे समत्व, आत्मसंयम, करुणा और निष्काम कर्म—व्यक्ति को नैतिक स्थिरता और आंतरिक शांति प्रदान करते हैं, जिससे वह जीवन की जटिलताओं का संतुलित रूप से सामना कर सकता है।

2. वैश्विक संघर्षों के बीच विश्वबंधुत्व की आवश्यकता

आज के वैश्विक परिदृश्य में युद्ध, धार्मिक असहिष्णुता, सांस्कृतिक टकराव और सामाजिक असमानता जैसी समस्याएँ मानवता के लिए गंभीर चुनौती बन गई हैं। इन परिस्थितियों में विश्वबंधुत्व की भावना अत्यंत आवश्यक

है, जो सभी मनुष्यों को एक समान दृष्टि से देखने की प्रेरणा देती है। श्रीकृष्ण के उपदेशों में यह स्पष्ट किया गया है कि सभी प्राणी एक ही परमात्मा के अंश हैं, अतः उनके प्रति समानता और करुणा का भाव रखना चाहिए। यह दृष्टिकोण वैश्विक शांति, सहयोग और सह-अस्तित्व की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3. गीता के शिक्षाओं की समकालीन प्रासंगिकता

भगवद्गीता की शिक्षाएँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी प्राचीन काल में थीं। यह ग्रंथ केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र—शिक्षा, समाज, राजनीति और व्यक्तिगत विकास—में नैतिक दिशा प्रदान करता है। गीता व्यक्ति को कर्तव्यपरायणता, निःस्वार्थ सेवा और आत्मसंयम का मार्ग दिखाती है, जिससे वह न केवल स्वयं का विकास करता है, बल्कि समाज के कल्याण में भी योगदान देता है। इस प्रकार, गीता के सिद्धांत आधुनिक जीवन की चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करते हुए एक संतुलित और नैतिक जीवन-दृष्टि प्रदान करते हैं।

गीता पर प्राचीन एवं आधुनिक टीकाएँ

भगवद्गीता पर प्राचीन एवं आधुनिक काल में अनेक आचार्यों और विद्वानों ने टीकाएँ लिखी हैं, जिनके माध्यम से इसके गूढ़ दार्शनिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक सिद्धांतों की व्याख्या विभिन्न दृष्टिकोणों से की गई है। प्राचीन टीकाओं में आदि शंकराचार्य की व्याख्या विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जिसमें उन्होंने अद्वैत वेदांत के आधार पर गीता को ब्रह्मज्ञान और आत्मसाक्षात्कार का ग्रंथ बताया। इसके विपरीत रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत दृष्टिकोण से गीता की व्याख्या करते हुए भक्ति और ईश्वर-समर्पण को प्रमुख स्थान दिया। मध्वाचार्य ने द्वैत वेदांत के आधार पर जीव और ईश्वर के भेद को स्पष्ट करते हुए भक्ति को मोक्ष का प्रमुख साधन माना। मध्यकालीन एवं आधुनिक टीकाओं में स्वामी विवेकानन्द ने गीता को कर्मयोग और व्यावहारिक वेदांत का आधार बताया, जबकि महात्मा गांधी ने इसे 'आध्यात्मिक मार्गदर्शक' के रूप में स्वीकार करते हुए निष्काम कर्म और अहिंसा के सिद्धांतों को विशेष महत्त्व दिया। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने गीता की व्याख्या दार्शनिक एवं तुलनात्मक दृष्टि से करते हुए इसे सार्वभौमिक नैतिकता और मानवता का ग्रंथ बताया। आधुनिक विद्वानों ने गीता को केवल धार्मिक ग्रंथ न मानकर एक व्यावहारिक जीवन-दर्शन के रूप में प्रस्तुत किया है, जो व्यक्ति के मानसिक, नैतिक और सामाजिक विकास में सहायक है। इस प्रकार, विभिन्न टीकाओं के माध्यम से गीता का बहुआयामी स्वरूप स्पष्ट होता है, जो इसे एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक ग्रंथ बनाता है।

स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गांधी एवं डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के विचार

भगवद्गीता के संबंध में विभिन्न आधुनिक विचारकों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से इसकी व्याख्या करते हुए इसके नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक महत्त्व को स्पष्ट किया है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार गीता व्यावहारिक वेदांत का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो मनुष्य को कर्मयोग के माध्यम से जीवन में सक्रिय रहते हुए आध्यात्मिक

उन्नति की प्रेरणा देती है। उन्होंने गीता के निष्काम कर्म के सिद्धांत को विशेष महत्त्व देते हुए कहा कि मनुष्य को अपने कर्तव्य का पालन बिना किसी स्वार्थ के करना चाहिए, यही सच्चा धर्म है।

इसी प्रकार महात्मा गांधी ने गीता को अपना 'आध्यात्मिक मार्गदर्शक' माना और इसे "अनासक्ति योग" का ग्रंथ कहा। उनके अनुसार गीता का मुख्य संदेश है—कर्म करते हुए भी फल की आसक्ति का त्याग करना। गांधीजी ने गीता के माध्यम से सत्य, अहिंसा और आत्मसंयम के सिद्धांतों को अपने जीवन में अपनाया और सामाजिक परिवर्तन का आधार बनाया। उनके विचार में गीता केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि नैतिक जीवन जीने की कला सिखाने वाला ग्रंथ है।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने गीता की व्याख्या दार्शनिक एवं सार्वभौमिक दृष्टिकोण से की। उनके अनुसार गीता मानवता के लिए एक सार्वभौमिक नैतिक ग्रंथ है, जो विभिन्न धार्मिक और दार्शनिक परंपराओं के बीच समन्वय स्थापित करता है। उन्होंने गीता को मानव जीवन के संघर्षों और द्वंद्वों का समाधान प्रस्तुत करने वाला ग्रंथ बताया, जो व्यक्ति को आत्मज्ञान, कर्तव्यनिष्ठा और आध्यात्मिक संतुलन की दिशा में प्रेरित करता है। इस प्रकार इन तीनों महान विचारकों के मतों से यह स्पष्ट होता है कि गीता का संदेश केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक और वैश्विक स्तर पर भी अत्यंत प्रासंगिक है।

विश्वबंधुत्व की दार्शनिक अवधारणा

विश्वबंधुत्व की दार्शनिक अवधारणा इस मूल सिद्धांत पर आधारित है कि समस्त मानवजाति एवं समस्त प्राणी एक ही सार्वभौमिक चेतना या परम सत्ता के अंश हैं, अतः उनके बीच किसी प्रकार का भेदभाव करना वास्तविकता के विपरीत है। भगवद्गीता में यह विचार स्पष्ट रूप से प्रतिपादित है कि ज्ञानी व्यक्ति सभी प्राणियों में समान आत्मा का दर्शन करता है—*"विद्या विनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि, शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः"* (5.18)—अर्थात् सच्चा ज्ञानी सभी में समदृष्टि रखता है। यह समत्व ही विश्वबंधुत्व की आधारशिला है, जो जाति, धर्म, वर्ण, भाषा और राष्ट्र जैसे बाह्य विभाजनों से परे एक व्यापक मानवीय एकता की स्थापना करता है।

इस अवधारणा का दार्शनिक आधार अद्वैत वेदांत में निहित है, जहाँ आत्मा और ब्रह्म की एकता को स्वीकार किया गया है, तथा सभी प्राणियों को उसी परम सत्य की अभिव्यक्ति माना गया है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—*"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति"* (6.30)—अर्थात् जो व्यक्ति हर जगह ईश्वर को देखता है और सबको ईश्वर में स्थित मानता है, वही वास्तविक ज्ञान प्राप्त करता है। यह दृष्टिकोण व्यक्ति को संकीर्णता से मुक्त कर व्यापक मानवता की भावना की ओर ले जाता है।

विश्वबंधुत्व केवल एक दार्शनिक विचार नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक जीवन-दृष्टि भी है, जो करुणा, सहिष्णुता, सहयोग और परस्पर सम्मान जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित करती है। यह सामाजिक समरसता, वैश्विक शांति और सह-अस्तित्व की स्थापना का आधार बनती है। गीता का यह संदेश आधुनिक विश्व में अत्यंत प्रासंगिक है, जहाँ

विभाजन और संघर्ष की प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं। इस प्रकार, विश्वबंधुत्व की दार्शनिक अवधारणा मानवता के एकीकरण और नैतिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है, जो व्यक्ति को संकीर्ण स्वार्थ से ऊपर उठाकर सार्वभौमिक कल्याण की दिशा में प्रेरित करती है।

मानव मूल्यों के सिद्धांत (नैतिकता, धर्म, करुणा)

- **नैतिकता**

भगवद्गीता में नैतिकता को जीवन के आचरण का आधार माना गया है, जो सत्य, अहिंसा, आत्मसंयम, समत्व और विनम्रता जैसे गुणों पर आधारित है। गीता के अनुसार आदर्श व्यक्ति वह है जो अपने व्यवहार में संतुलन और संयम बनाए रखता है तथा किसी भी परिस्थिति में अपने नैतिक सिद्धांतों से विचलित नहीं होता। “*अद्वेष्ट सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च*” (12.13) जैसे श्लोक यह स्पष्ट करते हैं कि नैतिकता केवल व्यक्तिगत गुण नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता का भी आधार है। इस प्रकार नैतिकता व्यक्ति के चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

- **धर्म (कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व)**

गीता में धर्म का अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि कर्तव्य और उत्तरदायित्व के पालन से है। प्रत्येक व्यक्ति का एक स्वधर्म होता है, जिसे निष्काम भाव से करना उसका कर्तव्य है। “*स्वधर्मो निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः*” (3.35)—इस श्लोक के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि अपने कर्तव्य का पालन करना ही सच्चा धर्म है। धर्म व्यक्ति को जीवन में अनुशासन, कर्तव्यनिष्ठा और उत्तरदायित्व की भावना प्रदान करता है, जिससे समाज में व्यवस्था और संतुलन बना रहता है।

- **करुणा**

करुणा मानवता का मूल तत्व है, जो व्यक्ति को दूसरों के दुःख को समझने और उनके प्रति सहानुभूति रखने की प्रेरणा देता है। श्रीकृष्ण के उपदेशों में करुणा को एक आवश्यक मानवीय गुण बताया गया है, जो व्यक्ति को स्वार्थ से ऊपर उठाकर परोपकार की भावना विकसित करता है। करुणा के माध्यम से व्यक्ति समाज में प्रेम, सहयोग और सह-अस्तित्व की भावना को बढ़ावा देता है। इस प्रकार करुणा न केवल व्यक्तिगत उन्नति का साधन है, बल्कि यह विश्वबंधुत्व और सामाजिक समरसता की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

गीता का समन्वयवादी दृष्टिकोण

भगवद्गीता का एक प्रमुख दार्शनिक गुण इसका समन्वयवादी दृष्टिकोण है, जिसके अंतर्गत यह विभिन्न आध्यात्मिक मार्गों—कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग—को परस्पर विरोधी न मानकर पूरक रूप में प्रस्तुत करती है। गीता का संदेश यह है कि मनुष्य की प्रकृति, प्रवृत्ति और क्षमता भिन्न-भिन्न होती है, अतः उसे उसके

अनुरूप साधना-पथ का चयन करना चाहिए। श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि निष्काम कर्म, आत्मज्ञान और ईश्वर-भक्ति—तीनों मार्ग अंततः एक ही परम लक्ष्य, अर्थात् मोक्ष, की ओर ले जाते हैं।

गीता में समन्वय का यह भाव विशेष रूप से कर्म और भक्ति के संबंध में प्रकट होता है—“*यत्करोषि यदश्रासि यज्जुहोषि ददासि यत्, यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्*” (9.27)—अर्थात् सभी कर्मों को ईश्वर को अर्पित कर देना ही सच्चा समन्वय है। इसी प्रकार ज्ञान और भक्ति के संबंध को भी गीता में स्पष्ट किया गया है—“*भक्त्या मामभिजानाति*” (18.55)—जिससे यह सिद्ध होता है कि भक्ति के माध्यम से ही वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति संभव है।

यह समन्वयवादी दृष्टिकोण केवल दार्शनिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और नैतिक जीवन में भी संतुलन स्थापित करता है। गीता व्यक्ति को यह सिखाती है कि वह अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए, ज्ञान के प्रकाश से मार्गदर्शित होकर और भक्ति के भाव से प्रेरित होकर जीवन जीए। इस प्रकार गीता का समन्वयवादी दृष्टिकोण एक समग्र जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है, जो व्यक्ति को आंतरिक शांति, नैतिक दृढ़ता और आध्यात्मिक उन्नति की दिशा में अग्रसर करता है तथा समाज में समरसता और संतुलन स्थापित करने में सहायक सिद्ध होता है।

गीता में विश्वबंधुत्व का संदेश

1. समत्व का सिद्धांत

भगवद्गीता में विश्वबंधुत्व की आधारशिला “समत्व” के सिद्धांत पर टिकी है, जिसके अनुसार ज्ञानी व्यक्ति सभी प्राणियों में समान आत्मा का दर्शन करता है और किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करता। यह समत्व केवल वैचारिक स्तर तक सीमित नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन में भी प्रकट होना चाहिए, जहाँ व्यक्ति जाति, वर्ग, धर्म और सामाजिक स्थिति के भेदों से ऊपर उठकर सबके साथ समान व्यवहार करता है। गीता में समत्व को योग की परिभाषा के रूप में भी स्वीकार किया गया है—“*समत्वं योग उच्यते*” (2.48)—जो यह दर्शाता है कि संतुलित दृष्टिकोण ही वास्तविक आध्यात्मिकता है।

2. सर्वभूत हित की भावना

गीता का विश्वबंधुत्व संदेश “सर्वभूत हित” की भावना में भी परिलक्षित होता है, जिसमें व्यक्ति अपने हित के साथ-साथ समस्त प्राणियों के कल्याण की कामना करता है। यह भावना व्यक्ति को स्वार्थ से ऊपर उठाकर परोपकार, सेवा और करुणा की ओर प्रेरित करती है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि सच्चा योगी वही है जो सभी प्राणियों के सुख-दुःख को अपने समान अनुभव करता है—“*आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन*” (6.32)। यह दृष्टिकोण सामाजिक समरसता और वैश्विक शांति की स्थापना में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

3. ईश्वर की समदृष्टि

गीता में यह भी स्पष्ट किया गया है कि ईश्वर स्वयं सभी प्राणियों के प्रति समदृष्टि रखते हैं और किसी के साथ पक्षपात नहीं करते। यह सिद्धांत विश्वबंधुत्व की भावना को और अधिक सुदृढ़ करता है, क्योंकि जब ईश्वर सभी को समान दृष्टि से देखते हैं, तो मनुष्य को भी उसी दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए। गीता में कहा गया है— “समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्ति न प्रियः” (9.29)—अर्थात् मैं सभी प्राणियों में समान हूँ, न कोई मेरा प्रिय है और न ही अप्रिय। यह विचार मनुष्य को समता, सहिष्णुता और निष्पक्षता की ओर प्रेरित करता है।

गीता के अनेक श्लोक विश्वबंधुत्व के इस संदेश को स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए—“*विद्या विनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि, शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः*” (5.18)—इस श्लोक में यह बताया गया है कि सच्चा ज्ञानी व्यक्ति सभी में समान आत्मा का दर्शन करता है, चाहे वह ब्राह्मण हो या पशु। इसी प्रकार—“*सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि*” (6.29)—यह श्लोक दर्शाता है कि योगी सभी प्राणियों में आत्मा को और आत्मा में सभी प्राणियों को देखता है। इन शिक्षाओं के माध्यम से गीता यह स्पष्ट करती है कि विश्वबंधुत्व केवल एक आदर्श नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक जीवन-दृष्टि है, जो मानवता को एकता, शांति और सह-अस्तित्व की ओर अग्रसर करती है।

साहित्य समीक्षा

भगवद्गीता तथा उससे संबंधित दार्शनिक परंपराओं के अध्ययन में आधुनिक विद्वानों ने भक्ति, धर्म, नैतिकता और विश्वबंधुत्व के सिद्धांतों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया है। रिचर्ड एच. डेविस (2015) ने *भगवद्गीता: एक जीवनी* में गीता को केवल धार्मिक ग्रंथ न मानकर एक जीवंत सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पाठ के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार गीता का प्रभाव विभिन्न कालखंडों में परिवर्तित होता रहा है और यह विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक संदर्भों में पुनःव्याख्यायित होती रही है। डेविस यह स्पष्ट करते हैं कि गीता का संदेश सार्वभौमिक है, जो व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास के साथ-साथ सामाजिक समरसता स्थापित करने में सहायक है। इसी प्रकार फ्रांसिस एक्स. क्लूनी (2014) ने तुलनात्मक धर्मदृष्टि से भक्ति और समर्पण की अवधारणा का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि ईश्वर के प्रति प्रेम विभिन्न धार्मिक परंपराओं में एक समान तत्व है। उनके अनुसार भक्ति एक ऐसा माध्यम है जो विभिन्न धर्मों के बीच संवाद स्थापित कर विश्वबंधुत्व की भावना को सुदृढ़ करता है।

जॉन स्ट्रैटन हॉली (2015) ने भक्ति आंदोलन का अध्ययन करते हुए यह प्रतिपादित किया कि भक्ति केवल व्यक्तिगत साधना नहीं, बल्कि एक सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलन भी है, जिसने समाज में समानता और समरसता की भावना को बढ़ावा दिया। उनके अनुसार भक्ति आंदोलन ने धार्मिक अनुभव को सर्वसुलभ बनाया और विभिन्न वर्गों के बीच दूरी को कम किया। एंड्रयू जे. निकोलसन (2010) ने हिंदू दर्शन के एकीकरण की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि विभिन्न दार्शनिक परंपराओं का समन्वय एक व्यापक दृष्टिकोण को जन्म देता है। यह समन्वयवादी दृष्टिकोण गीता के दर्शन से मेल खाता है, जहाँ विभिन्न योगमार्गों को एक ही

लक्ष्य की ओर अग्रसर बताया गया है। इस प्रकार निकोलसन का अध्ययन यह संकेत करता है कि गीता का समन्वयवादी स्वरूप विश्वबंधुत्व की दार्शनिक नींव को सुदृढ़ करता है।

आनंदानंद रामबचन (2015) ने अद्वैत वेदांत के संदर्भ में भक्ति और मोक्ष के संबंध का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया कि भक्ति और ज्ञान परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं। उनके अनुसार भक्ति व्यक्ति को आत्मज्ञान की ओर ले जाती है और उसे सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक बनाती है। जे. एन. सिन्हा (2016) ने भारतीय दर्शन के अध्ययन में भक्ति को एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में प्रस्तुत किया है, जो व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास में सहायक है। अरविंद शर्मा (2017) ने शास्त्रीय हिंदू विचारधारा का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि धर्म, नैतिकता और आध्यात्मिकता एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं और इनका समन्वय ही आदर्श जीवन का आधार है।

अंततः एक्सेल माइकल्स (2016) ने हिंदू धर्म के ऐतिहासिक और समकालीन स्वरूप का अध्ययन करते हुए यह स्पष्ट किया कि धार्मिक परंपराएँ समय के साथ परिवर्तित होती रहती हैं, किंतु उनके मूल सिद्धांत—जैसे भक्ति, धर्म और नैतिकता—स्थायी रहते हैं। उनके अनुसार गीता का संदेश आज भी अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि यह व्यक्ति को आंतरिक शांति, सामाजिक उत्तरदायित्व और वैश्विक एकता की दिशा में प्रेरित करता है। उपर्युक्त सभी विद्वानों के विचारों का समन्वित विश्लेषण यह दर्शाता है कि गीता का विश्वबंधुत्व संदेश और मानव मूल्यों में उसका योगदान एक बहुआयामी, समन्वित और सार्वकालिक अवधारणा है, जो न केवल आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रदान करती है, बल्कि सामाजिक समरसता, वैश्विक शांति और नैतिक समाज निर्माण के लिए भी एक सशक्त आधार प्रस्तुत करती है।

गीता में मानव मूल्यों का प्रतिपादन

1. अहिंसा, सत्य, करुणा

भगवद्गीता में मानव मूल्यों का आधार अहिंसा, सत्य और करुणा जैसे सार्वभौमिक सिद्धांतों पर टिका हुआ है, जो व्यक्ति के नैतिक एवं सामाजिक जीवन को दिशा प्रदान करते हैं। गीता में अहिंसा को केवल शारीरिक हिंसा के अभाव तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि इसे विचार, वचन और कर्म की शुद्धता से जोड़ा गया है। सत्य का अर्थ यहाँ केवल तथ्यात्मक सत्य नहीं, बल्कि धर्म के अनुरूप आचरण करना है। करुणा वह गुण है, जो व्यक्ति को दूसरों के दुःख को समझने और उनके प्रति सहानुभूति रखने की प्रेरणा देता है। श्रीकृष्ण द्वारा वर्णित आदर्श भक्त के गुण—“अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च” (12.13)—स्पष्ट करते हैं कि सच्चा मनुष्य वही है जो सभी प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव और करुणा रखता है। ये मूल्य विश्वबंधुत्व और सामाजिक समरसता की आधारशिला हैं।

2. आत्मसंयम एवं कर्तव्य

गीता में आत्मसंयम और कर्तव्यपरायणता को मानव जीवन के महत्वपूर्ण स्तंभों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आत्मसंयम व्यक्ति को अपनी इंद्रियों, मन और भावनाओं पर नियंत्रण रखने की प्रेरणा देता है, जिससे वह संतुलित और अनुशासित जीवन जी सके। कर्तव्य का सिद्धांत गीता में अत्यंत महत्वपूर्ण है—“कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन” (2.47)—जो व्यक्ति को निष्काम भाव से अपने कार्य करने की प्रेरणा देता है। यहाँ कर्तव्य केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं, बल्कि समाज और मानवता के कल्याण के लिए भी आवश्यक माना गया है। इस प्रकार आत्मसंयम और कर्तव्य का समन्वय व्यक्ति को नैतिक दृढ़ता और जीवन में उद्देश्य प्रदान करता है।

3. निःस्वार्थ सेवा

गीता में निःस्वार्थ सेवा को मानव मूल्यों के सर्वोच्च रूपों में से एक माना गया है, जिसमें व्यक्ति अपने कर्मों को बिना किसी स्वार्थ के समाज और ईश्वर के प्रति समर्पित करता है। यह सेवा भावना व्यक्ति को अहंकार और स्वार्थ से मुक्त कर उसे व्यापक मानवता की सेवा के लिए प्रेरित करती है। भगवद्गीता में कहा गया है—“यत्करोषि यदश्रासि यज्जुहोषि ददासि यत्, यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्” (9.27)—अर्थात् प्रत्येक कर्म को ईश्वर को अर्पित करना ही सच्ची सेवा है। निःस्वार्थ सेवा के माध्यम से व्यक्ति समाज में सहयोग, सहानुभूति और परस्पर सम्मान की भावना को बढ़ावा देता है।

4. नैतिक नेतृत्व

गीता में नैतिक नेतृत्व की अवधारणा भी स्पष्ट रूप से प्रतिपादित की गई है, जिसमें नेता का आचरण समाज के लिए आदर्श बनता है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—“यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः” (3.21)—अर्थात् श्रेष्ठ व्यक्ति जैसा आचरण करता है, अन्य लोग उसका अनुसरण करते हैं। इस प्रकार नेतृत्व केवल अधिकार या शक्ति का प्रतीक नहीं, बल्कि नैतिकता, उत्तरदायित्व और आदर्श आचरण का प्रतीक है। गीता के अनुसार सच्चा नेता वही है, जो निःस्वार्थ भाव से समाज के कल्याण के लिए कार्य करता है और अपने आचरण से दूसरों को प्रेरित करता है। इस प्रकार गीता में प्रतिपादित मानव मूल्य व्यक्ति के समग्र विकास के साथ-साथ समाज में नैतिकता, समरसता और विश्वबंधुत्व की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

विश्वबंधुत्व एवं मानव मूल्यों का अंतर्संबंध

1. सामाजिक समरसता

भगवद्गीता के अनुसार सामाजिक समरसता का आधार मानव मूल्यों और विश्वबंधुत्व की संयुक्त भावना में निहित है। जब व्यक्ति सभी प्राणियों में एक ही आत्मा का दर्शन करता है, तब उसके भीतर भेदभाव, घृणा और असमानता की भावना स्वतः समाप्त हो जाती है। गीता में कहा गया है—“विद्या विनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि, शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः” (5.18)—जो यह स्पष्ट करता है कि सच्चा ज्ञानी सभी के प्रति समान

दृष्टि रखता है। यह समदृष्टि सामाजिक संबंधों में समानता, सहिष्णुता और सहयोग को बढ़ावा देती है, जिससे समाज में समरसता स्थापित होती है।

2. वैश्विक शांति

आज के समय में वैश्विक स्तर पर बढ़ते संघर्ष, युद्ध और सांस्कृतिक टकराव मानवता के लिए गंभीर चुनौती बन गए हैं। ऐसे परिदृश्य में श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित समदृष्टि और सर्वभूत हित की भावना वैश्विक शांति के लिए एक सशक्त आधार प्रस्तुत करती है। गीता में कहा गया है—*“समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्ति न प्रियः”* (9.29)—जो यह दर्शाता है कि ईश्वर सभी के प्रति समान हैं। जब मनुष्य इस दृष्टिकोण को अपनाता है, तब वह द्वेष, हिंसा और असहिष्णुता से मुक्त होकर सहयोग, सह-अस्तित्व और शांति की दिशा में अग्रसर होता है।

3. नैतिक समाज निर्माण

नैतिक समाज का निर्माण मानव मूल्यों के पालन और विश्वबंधुत्व की भावना के विकास पर निर्भर करता है। भगवद्गीता में सत्य, अहिंसा, आत्मसंयम, निःस्वार्थ सेवा और कर्तव्यपरायणता जैसे मूल्यों को विशेष महत्व दिया गया है। गीता का यह सिद्धांत—*“कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन”* (2.47)—व्यक्ति को निष्काम भाव से अपने कर्तव्यों का पालन करने की प्रेरणा देता है, जिससे वह समाज के कल्याण में योगदान देता है। जब व्यक्ति इन मूल्यों को अपनाता है, तब वह समाज में नैतिकता, न्याय और समानता की स्थापना करता है। इस प्रकार विश्वबंधुत्व और मानव मूल्यों का समन्वय एक आदर्श समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करता है।

आधुनिक संदर्भ में गीता की प्रासंगिकता

1. वैश्वीकरण और नैतिक संकट

भगवद्गीता के सिद्धांत आज के वैश्वीकरण के युग में उत्पन्न नैतिक संकटों के समाधान के रूप में अत्यंत प्रासंगिक हैं। तीव्र आर्थिक प्रतिस्पर्धा, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक टकराव के कारण मानव जीवन में मूल्यहीनता, असंतोष और असहिष्णुता बढ़ रही है। ऐसे परिदृश्य में गीता का समत्व, आत्मसंयम और निष्काम कर्म का संदेश व्यक्ति को संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करता है। श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित यह विचार कि मनुष्य को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए फल की आसक्ति से मुक्त रहना चाहिए, आधुनिक जीवन की जटिलताओं में नैतिक स्थिरता और मानसिक शांति का आधार बनता है।

2. शिक्षा, राजनीति और समाज में उपयोग

गीता की शिक्षाएँ केवल आध्यात्मिक क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं, बल्कि शिक्षा, राजनीति और सामाजिक जीवन में भी अत्यंत उपयोगी हैं। शिक्षा के क्षेत्र में यह विद्यार्थियों को अनुशासन, आत्मसंयम और कर्तव्यपरायणता की प्रेरणा देती है। राजनीति में गीता का संदेश नैतिक नेतृत्व, निष्पक्षता और जनकल्याण के सिद्धांतों को स्थापित करता है—*“यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेतेतरो जनः”* (3.21)—अर्थात् नेता के आचरण का समाज पर गहरा प्रभाव

पड़ता है। सामाजिक जीवन में गीता के सिद्धांत सहयोग, सहिष्णुता और समरसता को बढ़ावा देते हैं, जिससे एक संतुलित और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण संभव होता है।

3. व्यक्तिगत जीवन में मार्गदर्शन

व्यक्तिगत स्तर पर भगवद्गीता व्यक्ति को जीवन के संघर्षों, द्वंद्वों और मानसिक तनाव से उबरने का मार्ग दिखाती है। यह आत्मसंयम, धैर्य, सकारात्मक सोच और कर्तव्यनिष्ठा का संदेश देकर व्यक्ति को आंतरिक शांति और आत्मिक संतोष प्रदान करती है। गीता का यह उपदेश—“*मन्मना भव मद्भक्तो*” (9.34)—व्यक्ति को अपने मन को उच्च आदर्शों में स्थिर करने की प्रेरणा देता है। इस प्रकार गीता केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक जीवन-दर्शन है, जो आधुनिक जीवन की चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करते हुए व्यक्ति को संतुलित, नैतिक और सफल जीवन जीने की दिशा प्रदान करती है।

निष्कर्ष

भगवद्गीता के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि इसका विश्वबंधुत्व संदेश और मानव मूल्यों में योगदान अत्यंत व्यापक, गहन और सार्वकालिक है। गीता मानवता को यह शिक्षा देती है कि समस्त प्राणी एक ही परमात्मा के अंश हैं, अतः उनके प्रति समानता, करुणा और सह-अस्तित्व की भावना रखना ही सच्चा धर्म है। श्रीकृष्ण के उपदेशों में समत्व, निष्काम कर्म, आत्मसंयम और भक्ति जैसे सिद्धांत व्यक्ति को न केवल आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाते हैं, बल्कि उसे एक आदर्श सामाजिक और नैतिक जीवन जीने की प्रेरणा भी प्रदान करते हैं। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि विश्वबंधुत्व और मानव मूल्य परस्पर गहराई से जुड़े हुए हैं, जहाँ विश्वबंधुत्व की भावना मानव मूल्यों के व्यावहारिक अनुप्रयोग से ही साकार होती है। सामाजिक समरसता, वैश्विक शांति और नैतिक समाज निर्माण जैसे लक्ष्य तभी प्राप्त किए जा सकते हैं जब व्यक्ति गीता के सिद्धांतों को अपने जीवन में अपनाए। आधुनिक युग में, जहाँ नैतिक संकट, सांस्कृतिक विभाजन और मानसिक तनाव बढ़ रहे हैं, गीता का समन्वयवादी दृष्टिकोण एक संतुलित और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि गीता केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक जीवन-दर्शन है, जो व्यक्ति को आत्मिक शांति, नैतिक दृढ़ता और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा में मार्गदर्शन देता है। इसका विश्वबंधुत्व संदेश आज के वैश्विक समाज के लिए अत्यंत प्रासंगिक है, जो मानवता को एकता, शांति और समरसता की ओर अग्रसर करने में सक्षम है।

संदर्भ

1. डेविस, आर. एच. (2015). भगवद गीता: एक जीवनी। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. क्लूनी, एफ. एक्स. (2014). उनका छिपने का स्थान अंधकार है: एक हिंदू-कैथोलिक धर्मशास्त्रीय चिंतन। स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. हॉली, जे. एस. (2015). गीतों का तूफान: भारत और भक्ति आंदोलन का विचार। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. निकोलसन, ए. जे. (2010). हिंदू धर्म का एकीकरण: भारतीय बौद्धिक इतिहास में दर्शन और पहचान। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. रामबचन, ए. (2015). मुक्ति का एक हिंदू धर्मशास्त्र: दो नहीं एक नहीं है। स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस।
6. सिन्हा, जे. एन. (2016). भारतीय दर्शन (खंड 1)। मोतीलाल बनारसीदास।
7. शर्मा, ए. (2017). शास्त्रीय हिंदू विचार: एक परिचय। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. माइकल्स, ए. (2016). हिंदू धर्म: अतीत और वर्तमान। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. हिल्टेबीटेल, ए. (2011). धर्म: विधि, धर्म और कथा में इसका प्रारंभिक इतिहास। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. मतिलाल, बी. के. (2017). नैतिकता और महाकाव्य: महाभारत और नैतिक दुविधाएँ। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. ओलिवेल, पी. (2014). प्रारंभिक उपनिषद: व्याख्यात्मक पाठ और अनुवाद। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
12. डोनिगर, डब्ल्यू. (2014). हिंदू धर्म पर। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
13. ऊयूश, ई. (2010). अद्वैत वेदांत: एक दार्शनिक पुनर्निर्माण। यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई प्रेस।
14. शर्मा, सी. (2013). भारतीय दर्शन का एक आलोचनात्मक सर्वेक्षण। मोतीलाल बनारसीदास।
15. चटर्जी, एस., और दत्ता, डी. (2012). भारतीय दर्शन का परिचय। कलकत्ता विश्वविद्यालय प्रेस।